

गज़ल

विजय वाते



आज जब हिन्दी में ग़ज़ल के नए शायर अंग्रेजी, फ़ारसी, संस्कृत के शब्दों से अपने लहजे में ग़ज़ल बना रहे हैं, तो मुझे सन् ६० के पहले का, अपनी शायरी का बचपन याद आता है। कितनी हिम्मत जुटाने के बाद मैंने अंग्रेजी से आए हुए शब्दों को ग़ज़ल में पहली बार छुआ था। अगर मुझे एक फीसदी भी कामयाबी मिली है, तो यकीनन इसलिए कि वो तब्द मैंने अंग्रेजी शब्दकोश से नहीं बल्कि भारतीय जिन्दगी से लिए थे। यही वह कारण है कि जब विजय वाते फ़ारसी के चंद शब्दों को आज की बोल-चाल के वज़न पर बांधते हैं, तो मैं उसका स्वागत करता हूँ। बड़ी जुबानों में शब्दों के फूल इसी तरह, अपनेपन के साथ खिलते हैं, उनका डिक्शनरी से ताल्लुक नाममात्र का ही होता है।

विजय वाते ग़ज़ल के एक नए लेकिन अच्छे शायर हैं। उनकी नजर आज की जिन्दगी के बहुत से पहलुओं पर है। उन्होंने आज की राजनीति, खुदगर्जी, सरमायादारी, सरकारी और गैर-सरकारी महकमों में आम इंसानों के साथ होती ज्यादाती और मानवीय रिश्तों के बिखराव के चेहरों को कुछ इस शाइस्तगी से बेनकाब किया है कि कुछ शेर ग़ज़ल की सारी खूबियों के साथ आज की जिन्दगी पेश करने में कामयाब हो गए हैं। एक नए शायर की यह एक बड़ी कामयाबी है।

ग़ज़ल की भाषा का अच्छा कंसेप्शन, इंसानियत और मोहब्बत से भरी हुई सोच और दुनिया की चालाकी को समझने वाली जहानत, को ग़ज़ल में बदलने का जो हुनर, कुछ अच्छे और नए शायर दिखा रहे हैं, उनमें, मैं विजय वाते को शुमार करता हूँ।

विजय वाते की दो ग़ज़लें मुझे अक्सर उस वक्त याद आती हैं जब मैं एक छोटे से शहर में अपनी दादी, मां या नानी की यादों के घर में होता हूँ या किसी वक्त, दुनिया के तमाम दुख-सुखों के साथ अपने परिवार में एक शमा को रोशनी देते और पिघलते देखता हूँ, जिससे वो घर चलता है, जो अपने आप में एक पूरा कुनबा है, जिसका रिश्ता हमारे बस्ती और मुल्क से है।

—बशीर बद्र

ग़ज़ल

ग़ज़ल

विजय वाते



वाणी प्रकाशन

का 'लोगो'
विख्यात चित्रकार मक़बूल फ़िदा हुसेन की
कूची से

ISBN : 978-93-5000-292-6



वाणी प्रकाशन
21-ए, दरियागंज, नयी दिल्ली-110002
द्वारा प्रकाशित
फोन : 0091#11#23273167, 23275710
फैक्स : 0091#11#23275710
ई-मेल : vaniprakashan@gmail.com
vani_prakashan@yahoo.com
वेबसाइट : www.vaniprakashan.in

संस्करण : 1998
संस्करण : 2010
© लेखकाधीन

GHAZAL
by Vijay Vate

दिन हफ्ते पखवाड़े बदले, सन् भी बदले हैं,
लेकिन घर के सारे कोने पहले जैसे हैं।
ये कविताएं
विशाल की याद के लिए

विजय वाते की ग़ज़लें

विजय वाते कोई मशहूर और चर्चित कवि, शायर तो हैं नहीं, पत्र पत्रिकाओं में बहुत ज्यादा छपे भी नहीं, इसलिए उनके पहले संकलन पर कुछ लिखने के पहले इसे सिलसिले में पढ़ जाना पड़ा और इन हिन्दी ग़ज़लों के बहाने ग़ज़ल की भाषा पर कुछ बातचीत करने का मन हुआ। दरअसल, सच्ची ग़ज़ल बोलचाल की उस जुबान में कही जाती है, जो साहित्य की भाषा भी होती है। ग़ज़ल में 'शब्द' डिक्शनरी से जुड़ा रहकर भी स्वतंत्र हो जाता है। डिक्शनरी में जो शब्द लोहे के फ्रेम में जड़ा एक फोटोग्राफ होता है, वह ग़ज़ल में इस तरह इतनी जिन्दगियाँ जीता है, मानो वह हजारों-हजारों पत्तियों वाला ऐसा फूल है, जिसकी हर पत्ती की एक अलग जीवनशैली और अपना स्पन्दन होता है। दुनिया की हर अच्छी शायरी में 'शब्द' की यही अहमियत होती है। हजारों साल की जिन्दगी जीते हुए कितने ही शब्द, इस तरह आजाद हो गये और फिर ग़ज़ल के शेरों के स्पर्श से बीते युगों की दास्तान, आज की कहानी और आने वाले ख्वाबों की पहचान बन गये।

धरती, कस्बा, गांव, घर, महल्ले, दादी, माँ, पिता, वालिद, शहर जैसे संज्ञा वाचक शब्द अलग-अलग शेरों में अपने साथ ऐसी दुनियाएं लाते हैं जहाँ उनका डिक्शनरी से नाम मात्र का ही संबंध रह जाता है। अच्छी और सच्ची शायरी का यही कमाल है। यकीनन कोई भी जुबान सिर्फ गीत, ग़ज़ल बनकर दुनिया में नहीं जी सकती, इसलिए मैं डिक्शनरी का अंकुश पूरी तरह हटाने की कोई मांग भी नहीं करता। लेकिन यह भी सच है कि ग़ज़ल में शब्द के संस्कार बोलते हैं, शब्दार्थ नहीं।

उर्दू में मुआफ शब्द फारसी से आया है, शायद मैं भी कभी-कभी मुआफ बोलता हूँ। लेकिन मैं इस तलफ़ुज़ को ग़ज़ल के शेर में नहीं बांध सका। तहजीब और किताबों के इस लहजे का संस्कार, ग़ज़ल के संस्कारों से आईडेंटिफाई नहीं करता। कम से कम मुझे तो ऐसा नहीं लगता। मैं यहाँ फिर साफ कहना चाहूँगा कि जो लोग तलफ़ुज़ की पाबन्दी करते हैं, मैं उनकी इज्जत करता हूँ और इसलिए करता हूँ कि भाषा की हिफाजत होनी चाहिए और उस हिफाजत करने वाले की इज्जत भी। लेकिन जहाँ तक ग़ज़ल का मसला है, वह हमारी रोजमर्रा की तहजीब की नुमाइंदगी है, इसलिए मैं इंतजार करता हूँ कि डिक्शनरी का कोई शब्द, कब दिल में ग़ज़ल का दरवाजा खोले, और तब ग़ज़ल की भाषा में आए।

इस वक्त मेरे सामने उर्दू लिपि में छपने वाला दैनिक अखबार 'हिन्द समाचार' रखा है।

उर्दू का यह सबसे ज्यादा बिकने वाला अखबार है, और इसके नाम में 'हिन्द' शब्द फारसी से आया है, जबकि 'समाचार' हमारी भारतीय बोली से। इसमें छपी यह पंक्ति तीन शब्दों का एक फिकरा है 'नक्काशी के अद्भुत फर्निचर्स'। जाहिर है आज की हिन्दी और उर्दू में अनेकों विशेषण व संज्ञा वाचक शब्द संस्कृत, फारसी और अंग्रेजी से आ चुके हैं।

हम जो कुछ पहनते-ओढ़ते हैं जैसे पेंट, शर्ट, कोट, टाई या जो कुछ ड्राइंगरूम में रखा होता है, जैसे टी.वी., फ्रीज, टेबिल, बल्ब, फ्रेम, फोटो आदि या हमारे आस-पास के अन्य शब्द आफिस, एयरपोर्ट, स्टेशन, बस स्टैण्ड, टिकिट, रिजर्वेशन, वगैरह-वगैरह, क्या इन शब्दों का रोमांच हम बिना कोई प्रयास किये किसी अन्य संज्ञा में महसूस कर पाएंगे? टिकिट और आफिस के लिए कौन सी संज्ञा आपके के एकदम करीब है? जो शब्द हमारी जिन्दगी जीने लगे, वह हमारे हो जाते हैं। इसलिए अगर इस हैडलाईन को पूरी तरह, उर्दू के जानने वाले, अद्भुत और फर्नीचर के कारण न समझ पाएं, तो मैं यह मानूंगा कि वो आज की उर्दू को समझने में कमजोर हैं। और जो लोग आज की उर्दू और हिन्दी को नहीं जानते, मैं मानता हूँ कि वे अच्छी हिन्दी और उर्दू नहीं जानते।

यही कारण है कि जब हिन्दी ग़ज़ल में फारसी के कुछ शब्दों को अपने वजन में बांधा गया जैसे - शहर, शमा, सुबह, पहर जैसे शब्दों को, जो उर्दू में दर्द के वजन में लिखे जाते हैं और हिन्दी में दरद के वजन पर, तो मैं मानता हूँ कि यह किसी भी बड़ी भाषा का हक है। बड़ी भाषा के कवि को यकीनन यह हक हासिल है कि वह जिन्दगी की बोलचाल के हवाले से जिसे अपने दिलो-दिमाग के करीब महसूस करे, वही लिखे या उसके अनुकूल तलफ़फ़ुज़ और लहजा बदले। शर्त यही है कि सभी हिन्दी वाले यह बदला हुआ तलफ़फ़ुज़ अपने चलन में रखें। अभी ऐसा देखा जा रहा है कि कोई तो इन शब्दों को फारसी तलफ़फ़ुज़ में बांध देता है और कोई बदले हुए तलफ़फ़ुज़ में। इसमें ठहराव आना जरूरी है।

इसे थोड़ा यों समझें - उर्दू में लफ़्ज़ का बहुवचन अलफाज़ होता है, जजबा का बहुवचन जजबात, एहसास का बहुवचन एहसासात् और वाकया का बहुवचन वाकयात होता है। कई बार देखा गया है कि हिन्दी में लफ़्ज़ के बहुवचन के लिए अलफाज़ों का प्रयोग किया जाता है, तो जब्बे, एहसास और वाकये के बहुवचन के लिए जजबातों, एहसासातों, वाकयातों का प्रयोग किया जाता है। इस प्रयोग को मैं गलत नहीं कहूँगा, लेकिन हिन्दी के सभी लोगों को यह तय करना होगा कि जज़बात का एक वचन और जजबातों का बहुवचन के रूप में प्रयोग किया जाएगा। इससे मैं समझूँगा कि हिन्दी ने फारसी और उर्दू से अलग अपना खुद का, एक लफ़्ज़ बनाया है।

आज जब हिन्दी में ग़ज़ल के नए शायर अंग्रेजी, फारसी, संस्कृत के शब्दों से अपने-अपने लहजे में ग़ज़ल बना रहे हैं, तो मुझे सन् 60 के पहले का अपनी शायरी का बचपन याद आता है। कितनी हिम्मत जुटाने के बाद मैंने अंग्रेजी से आए हुए शब्दों को ग़ज़ल में पहली बार छुआ था; और आज ये महसूस करता हूँ कि अगर मुझे एक फीसदी भी

कामयाबी मिली है, तो यकीनन इसलिए कि वो शब्द मैंने अंग्रेजी डिक्शनरी से नहीं लिए थे, बल्कि भारतीय जिन्दगी से लिए थे। यही वह कारण है कि जब विजय वाते फारसी के चन्द शब्दों को आज की बोल-चाल के वज़न पर बांधते हैं तो उनका डिक्शनरी से ताल्लुक नाममात्र का ही रह जाता है।

विजय वाते ने भी शब्दों का तलफ़फ़ुज वही लिया है जो उनके दिल के करीब है, साहित्य की भाषा के नहीं। उन्होंने एक जगह खुला शब्द के लिए 'खुल्ला' शब्द का प्रयोग किया है। इस इस्तेमाल से शायद वे अपनी बात ज्यादा ताकत के साथ कह पा रहे हैं। लेकिन अगर यह उच्चारण आम स्वीकृति में नहीं है, तो फिर यह हिन्दी ग़ज़ल की भाषा का शब्द नहीं बन पाएगा। ऐसा ही सुन्दर प्रयोग उन्होंने एक शब्द 'झिलती' झेले जाने के स्थान पर किया है। ये उच्चारण मुझे दिल के करीब लगने से अच्छे लगे हैं। हालांकि इस सिलसिले में विजय वाते ने भी डरते हुए मगर सूझबूझ से काम लिया है। एक नए शायर के साथ यह न केवल स्वाभाविक है बल्कि जरूरी भी है। भाषा का एक अध्यापक होने के नाते, भाषा की शुद्धता का पक्षधर होने के नाते, और एक शायर होने के नाते मैं आज तक इस डर से मुक्त नहीं हो पाया हूँ, इसलिए 'किला आ' का तलफ़फ़ुज़ किला या 'मु-आफ' आज तक ग़ज़ल में नहीं बांध पाया।

विजय वाते ग़ज़ल के एक नए लेकिन अच्छे शायर हैं। उनकी नजर आज की जिन्दगी के बहुत से पहलुओं पर है। वो अपनी ग़ज़ल में सच्ची जिन्दगी जीते हैं, इसलिए उनकी ग़ज़ल में मोहब्बत की यादों के चिराग रोशन हैं, प्यार के ख्वाब हैं, जिन्दगी की धूप है, शहरों और सड़कों की दौड़-भाग है, गांव की कच्ची-पक्की पगडण्डियाँ हैं। इनके अधिकतर पात्र जिन्दगी को जीने वाले पात्र हैं। मैं उनकी ग़ज़लों को लेकर, उनके शेरों के झरोखे से ऐसे कितने ही मंजर देख सकता हूँ जहाँ कस्बों का अपनापन है, बड़े-बड़े शहरों की प्यारी-प्यारी सी बेरहम बेगानगी है, और ये सब कुछ अपना है। सिर्फ खूबसूरत ख्वाब ही अपने नहीं हैं, जुल्म करती सच्चाइयाँ भी अपनी हैं। विजय वाते की दो ग़ज़लें मुझे अक्सर उस वक्त याद आती हैं जब मैं एक छोटे से शहर में अपनी दादी, माँ, या नानी की यादों के घर में होता हूँ या किसी वक्त, दुनिया के तमाम दुख-सुखों के साथ अपने परिवार में एक शमा को रोशनी देते और पिघलते देखता हूँ, जिससे वो घर चलता है, जो अपने आप में एक पूरा कुनबा है। जिसका रिश्ता हमारे बस्ती और मुल्क से है। मैं इन दो ग़ज़लों के सिर्फ दो शेर यहाँ लिखूँगा :-

भूरे कुत्ते का, श्यामा गैया का,
हम सभी का ख्याल करती है
दादी अम्मा कमाल करती है ।

एक पल में जी लिये पूरे बरस पच्चीस हम

आज बिटिया जब दिखी साड़ी तेरी पहनी हुई ।

ये दोनों ग़ज़लें और उनकी कई ग़ज़लों के कई और रंग, पूरे अपनत्व से आपके साथ हो जाते हैं और यह कामयाबी कोई छोटी कामयाबी नहीं है। विजय वाते की ग़ज़लों ने आज की राजनाति, खुदगरजी, सरमायादारी, सरकारी और गैर सरकारी महकमों में आम इंसानों के साथ होती ज्यादाती और मानवीय रिश्तों के बिखराव के चेहरों को कुछ इस शाइस्तगी से बेनकाब किया है कि कुछ शेर, ग़ज़ल की सारी खूबियों के साथ आज की जिन्दगी को पेश करने में कामयाब हो गए हैं।

एक तकरीर सिर्फ काफी है,
क्या जरूरत दियासलाई की ।

बांट चूटकर रोटी सब्जी खाना जिसने सिखलाया,
माँ वो किसके हिस्से आई था जब दरवाजा बांटा ।

जो मिला जब भी मिला, दुनिया के गम लेके मिला,
आज मन है आपसे घरबार की बातें करें ।

एक नए शायर की यह एक बड़ी कामयाबी है। ग़ज़ल की भाषा का अच्छा कंसेप्शन, इंसानियत और मोहब्बत से भरी हुई सोच और दुनिया की चालाकी को समझने वाली ज़हानत को ग़ज़ल में बदलने का जो हुनर, कुछ अच्छे और नए शायर दिखा रहे हैं, उनमें, मैं विजय वाते को शुमार करता हूँ। बड़े से बड़े ग़ज़ल के शायर के यहाँ भी ग़ज़ल कहने की अच्छी कोशिशों के दरम्यान, कुछ एक ही अच्छे शेर हो पाते हैं, जो हमारे दिलो-दिमाग में छा जाते हैं, और जुबान पर सवारी गांठ लेते हैं। विजय वाते की इन ग़ज़लों में, अच्छी ग़ज़ल की खूबियों के साथ, कुछ ऐसे शेर यकीनन आपको मिल जाएंगे।

इस भरोसे के साथ,

—बशीर बद्र

ग़ज़ल से पहले

मध्य प्रदेश के एफ छोटे से कस्बे में रहने वाले तेरह बरस के उस लड़के को कविता का, या यों कहें, कवि सम्मेलनों का चस्का लग गया (उन दिनों कवि सम्मेलनों में भी कविता होती थी) लड़के के पिता धुर आदिवासी जिले के एक अंदरूनी गांव में स्टेशन मास्टर थे। वहीं वह प्राइमरी तक वनवासी बच्चों के बीच पढ़ा। आगे की पढ़ाई के लिए उसे नानी और मामा के पास भेज दिया गया। नाना थे नहीं, मामा लड़के से कुल तीन-चार साल ही बड़े थे। नानी संगमरमर की तरह झक्क गोरी और धुनके हुए कपास की तरह खिली-खिली, नरम-नरम थी। नौ गजी साड़ी पहिनने वाली नानी की पुरानी साड़ियों से बनी दुलई में धंसते हुए उसे नानी की खुशबू बहुत मजेदार लगती थी। वही स्पर्श और स्नेह की वही ऊष्मा, उसकी प्रतीक्षा में जागती-चिंतातुर नानी के हाथों से पिटाई में भी उसे मिलती; और रात-रात भर कवि सम्मेलनों में बैठे रहने की वजह से ऐसा अक्सर होता भी था। उसे लगता है कि नानी के नरम हाथों से नाराजगी तो कभी निथर ही नहीं सकी, अलबत्ता उस नरम-नरम नसीहत से उसका हौसला जरूर बढ़ा।

सन् 1962 : चीन के हिन्दुस्तान पर हमले का वर्ष। कवि सम्मेलनों में देशभक्ति और जोश-खरोश के खूब और खूब अच्छे गीत गाये जाते थे। लड़के ने भी छुपकर एक गीत लिखा, जिसे उसके मामा ने पढ़ लिया। लड़के की बाकायदा खिल्ली उड़ाई गई, उसे कविराज कहकर चिढ़ाया गया। वह रुआंसा हो गया और गुस्से में आकर उसने अपनी पहली कविता के कागज के छत्तीसों टुकड़े कर दिये। लड़कों के साथ ऐसा अक्सर होता है।

लड़के के घनघोर सनातनी खानदान में चूड़ीदार पायजामा, अचकन, शेरवानी, पठानी सूट और उर्दू वगैरह मुसलमानी बातें मानी जाती थीं और मुसलमानों से किसी भी तरह के ताल्लुकात के बारे में सोचा भी नहीं जा सकता था। कस्बे में थोड़े से मुसलमान रहते जरूर थे लेकिन उनके भी बच्चे सामान्य स्कूलों में पढ़ने नहीं जाते थे। एक उर्दू स्कूल भी था, जहाँ कुछ बच्चे पढ़ते भी हों तो लड़के को नहीं मालूम। लब्बो-लुबाब यह कि लड़के ने ग़ज़ल का नाम भी नहीं सुना था। हां, हिन्दी फिल्मों के कुछ खास गाने उसे अच्छे लगते थे, जिनके बारे उसने बाद में जाना कि वे ग़ज़लें थीं।

कालांतर में वह बड़ा हुआ, जैसे सब होते हैं। पढ़ाई-लिखाई के दिनों में छन्दमुक्त कविताएं लिखीं, जैसे सब कुछ न कुछ करते हैं। नौकरी की, जैसे जिन को मिल जाती है, वो

करते हैं। जीवन और जीविका की आपाधापी के दौरान कविता, अकविता, नई कविता, गीत, नवगीत, लोकगीत, ग़ज़लें, फिल्मी गाने, कव्वाली वगैरह-वगैरह जो कुछ भी, जहां कुछ भी, कानों में पड़ा, सुनता रहा, पढ़ने को मिला, पढ़ता रहा। अब उसका लंबी कविताएं लिखना बंद हो गया। दोहे और ग़ज़ल के शेर उसे अच्छे लगने लगे।

इस वक्त तक हिन्दी व देवनागरी में ग़ज़लें सरलता से उपलब्ध होने लगी थीं। वह भी ग़ज़लें पढ़ने लगा। मुश्किल अलफाज़ समझने के लिए हिन्दी-उर्दू डिक्शनरी देखने लगा। उसने हिन्दुस्तान और पाकिस्तान के क्लासिक शायरों को पढ़ा। उर्दू-हिन्दी के अलावा मराठी और गुजराती की ग़ज़लें भी पढ़ीं और ग़ज़ल की व्याकरण की किताबें भी। ग़ज़ल के शेर अब उसे स्वयं को अभिव्यक्त करने के भरोसेमंद उपकरण लगने लगे। वह मशहूर, मकबूल और मजबूत शायरों के सम्पर्क में आया और उनसे बातचीत के जरिए सीखने की कोशिश की। इसी दौरान तबादले पर वह प्रदेश की राजधानी में आ गया। अब उसके लेखन का आब्जेक्टिव परीक्षण भी होने लगा। यहां उसने पाया कि सार्थक बहस की गुंजाइश के बावजूद वह किसी बड़े व अच्छे शायर के बुरे शेर को पहचान कर कंडम कर सकता है और किसी गुमनाम शायर के अच्छे शेर को ढूंढ़कर उस पर गुफ्तगू भी। बावजूद इसके, उसने अपने संकलन से शुरुआती दौर की कुछ ग़ज़लों को अलग नहीं किया। ग़ज़ल की लंबी परम्परा में वक्त के साथ ग़ज़लगोई के निकष भी बदलते रहे हैं। क्या हर्ज कि अगर कुछ शेर ग़ज़ल के पुराने दिनों की याद ही दिला दें।

—विजय वाते

क्रम

बिन्दी तेरी
बातें करें - 1
दादी अम्मां
क्या जरूरत दियासलाई की
सरल ये गणित हमने सीखा नहीं है
उसने संकेत में कहा होगा
इसलिए कोई ग़ज़ल गाई नहीं
या बस सन्नाटा बांटा
शायरी खुद खिताब होती है
अन्दर कहीं उतरा हुआ
बाकी आना-जाना है
सुबह
दोपहर
शाम
सो भी जा
नींव अनाम सिपाही होंगे
गुनगुनाना चाहिए
मर जाती है बात
तो हम रुकें
सौ वजूहात याद आने के
कितने आसान सबके सफर हो गये
खुल्ला खाता है
दे धक्का आगे बढ़ जा तू
सीख लिया
बर्फ को पिघलने दो
मन रसखान हुआ

दर्द बयान हुआ
लोग
हम सभी
इन्सां को समझाए कौन
अपनी मर्जी जाना क्या

अपनी जगह
थोड़ा मन के अन्दर देख
पहले थोड़ा-सा तोला करो
उर्मिला से पूछिए
आजमाने का हुनर
उदास तो है
सबसे दोस्ती रखना
सितारों की बात है
मेरी तेरी सबकी बात
सबकी अपनी एक सफाई
कहां से लाऊं
के लिए
तो ग़ज़ल होती है - 1
तो ग़ज़ल होती है - 2
मेरी शायरी से उधार लो
सूर्य मेघों के भीतर छितर जाए रे
वो उनकी लुगाई है
आसपास
न हो
शानदार
दो पद चिन्ह तेरे
पन्थ बनता जाएगा
कर लो
होते गये
बातें करें - 2
क्या करूं
नाजुक हिस्से दे
रह गई

केंचुआ
अच्छा लगा
नमी कुछ रूमालों में है
है वो
कूव्वते इंतजार आ जाए
दूर तक जाती लगे
अटका है पांखी
दिन हफ्ते पखवाड़े बदले

कहने वाले दो मिसरों में सारा किस्सा कहते हैं,
नाच नहीं जिनको आता वो आंगन टेढ़ा कहते हैं।

बिन्दी तेरी

सर से पांवों तक यकायक एक सिहरन-सो हुई ।
आईने पर जो दिखी बिन्दी तेरी चिपकी हुई ।

एक पल में जी लिए पूरे बरस पच्चीस हम
आज बिटिया जब दिखी साड़ी तेरी पहनी हुई ।

अब छुअन में वो तपन वो आग बेचैनी नहीं
तू न घर हो, तो लगे, घर वापसी यों ही हुई ।

मेरे कुर्ते का बटन टूटा तो ये जाना कि क्यों
तू मुझे दिखती सदा है काम में उलझी हुई ।

घर के मानी और क्या बस ये ही दो आंखें तो हैं
द्वार पर अटकी हुई बस राह को तकती हुई ।

बातें करें – 1

आओ मिल के दो घड़ी संसार की बातें करें
कुछ करें शिक्वे गिले, कुछ प्यार की बातें करें ।

हो चुका, जो हो रहा है, फिक्र उसकी खूब की
इन सभी से बन रहे आसार की बातें करें ।

जो मिला, जब-जब मिला, दुनिया के गम लेकर मिला
आज मन है आपसे घर-बार की बातें करें ।

अब बड़े घर में बुजुर्गों के, नहीं तीमारदार
आओ मिलके उनसे कुछ उपचार की बातें करें ।

छत के गुण गाते हैं हम, जो दे रही है आसरा
छत टिकी कांधे पे जिस दीवार की बातें करें ।

दादी अम्मां

भोले-भाले सवाल करती है ।
दादी अम्मा कमाल करती है ।

शाम होते ही घर चले आना
हुक्म वो बेमिसाल करती है ।

भूरे कुत्ते का, श्यामा गैया का
हम सभी का ख्याल करती है ।

आज मावस है, कल शनीचर है
काम करना मुहाल करती है ।

सर से इक पल अगर गिरे आंचल
अम्मां दिन भर बवाल करती है ।

हम जो मुन्ने को डांट देते हैं
आंख रो-रो के लाल करती है ।

कांपते हाथ पोपले मुंह से
ज़िन्दगानी बहाल करती है ।

देह अपनी नहीं सम्भलती है
सारे जग का सम्हाल करती है ।

क्या जरूरत दियासलाई की

ले के मासूमियत खुदाई की
इक कहानी रची सफाई की ।

फिर से मिलने की बात मत कहना
पीर झिलती नहीं जुदाई की ।

एक तकरीर सिर्फ काफी है
क्या जरूरत दियासलाई की ।

तेरी आंखों से सुबह रूठ गई
क्यों भला मुझसे बेवफाई की ।

तितलियाँ लद गई हैं रिक्शों पर
पहली तारीख है जुलाई की ।

सरल ये गणित हमने सीखा नहीं है

यूं रोने का कोई नतीजा नहीं है,
मगर दिल पे काबू किसी का नहीं है ।

सही है कि दो और दो चार लेकिन,
सरल ये गणित हमने सीखा नहीं है ।

न हो कैफ़े-मस्ती, न दीवानगी तो
वो मिल जाए ऐसा तरीका नहीं है ।

सतह पर टटोले, न डूबे, न भीगे
ये शेरो-सुखन का सलीका नहीं है ।

उसने संकेत में कहा होगा

बात में दर्द भी दबा होगा ।
उसने संकेत में कहा होगा ।

जिसने खोली न उम्रभर आंखें
उसकी आंखों में कुछ छुपा होगा ।

वो मेरा घर हो या कि सपना हो
तेरी आंखों में जागता होगा ।

ये गज़ल है कि कोई हिचकी है
वो मेरी बात कर रहा होगा ।

इसलिए कोई ग़ज़ल गाई नहीं

आज तनहाई भी तनहाई नहीं
इसलिये कोई ग़ज़ल गाई नहीं ।

ज़ाहिरा तो थी नहीं कोई वजह
नींद लेकिन रात भर आई नहीं ।

निभ गई बस जब तलक भी निभ गई
यों निभाने की कसम खाई नहीं ।

जब मिले बस यों मिले कि हर तरफ
ढूंढने पर भी वजह पाई नहीं ।

थी मुसलसल साथ बिछड़ी ही नहीं
याद तेरी इसलिए आई नहीं ।

आज सुन लो जिंदगी की वो खबर
जो किसी अखबार में आई नहीं ।

या बस सन्नाटा बांटा

आओ देखें हमने अब तक, किस-किस को क्या-क्या बांटा
हमने कुछ दुख-दर्द बटाए या बस सन्नाटा बांटा ।

वांट-चूट कर रोटी, सब्जी, खाना जिसने सिखलाया
माँ वो किसके हिस्से आई, था जब दरवाजा बांटा ।

आग लगी थी शहर में जब-जब गली मुहल्ले थे भूखे
तब हमने आगी ही बांटी या थोड़ा आटा बांटा ।

कुछ सपने घर में पलते थे, कुछ आए डोली के संग
सास-बहू, ननदी-भाभी ने क्यों घर का चूल्हा बांटा ।

नदियां-नाले, झील, समंदर, ताल-तलैया का पानी
हमने बांटा, इन सबने कब, था अपना कुनबा बांटा ।

शायरी खुद खिताब होती है

पीर जब बेहिसाब होती है
शायरी लाजवाब होती है ।

इक न इक दिन तो ऐसा आता है
शक्ल हर बेनकाब होती है ।

चांदनी जिसको हम समझते हैं
गर्मी-ए-आफताब होती है ।

बेमज़ा हैं सभी कुतुबखाने
शायरी खुद किताब होती है ।

शायरी तो करम है मालिक का
शायरी खुद खिताब होती है ।

अन्दर कहीं उतरा हुआ

मुझको आंगन में दिखा पदचिन्ह इक उभरा हुआ
तू ही आया था यहाँ पर या मुझे धोखा हुआ?

मेरे घर में जिन्दगी की उम्र बस उतनी ही थी
जब तलक था नाम तेरा हर तरफ बिखरा हुआ ।

अब नजर इस रूप पर ठहरे भला तो किस तरह
है नजर में तू, नजर की राह तक फैला हुआ ।

क्या करूँ, क्या-क्या करूँ, कैसे करूँ तेरा बयां
तू तो बस अहसास है अन्दर कहीं उतरा हुआ ।

बाकी आना-जाना है

मन का मिलना ही मिलना है, तन तो एक बहाना है
तेरा आना ही आना है, बाकी आना-जाना है ।

झरने परबत सपने तारे बादल नैया गीत ग़ज़ल
वो था एक ज़माना अपना, ये भी एक ज़माना है

इस मेले में इक पल दो पल, उस मेले कुछ ज्यादा पल
लौट चलें अब पीछे यारों, सांझ हुई घर जाना है ।

मंदिर-मंदिर मूरत बेबस, हर चौगुंडे मस्जिद चुप
तेरा डर, तेरा होना है, बाकी खेल पुराना है ।

सुबह

आंख मलते हुए जागती है सुबह
और फिर रात दिन भागती है सुबह ।

सूर्य के ताप को जेब में डालकर
सात घोड़ों का रथ हांकती है सुबह ।

रात सोई नहीं नींद आई नहीं
सारे सपनों का सच जानती है सुबह ।

बाघ की बतकही, जुगनुओं की चमक
मर्म इनका कहां, आंकती है सुबह ।

आहटें शाम कीं, रात की दस्तकें
गुड़मुड़ी दोपहर लांघती है सुबह ।

दोपहर

भागते-भागते हो गई दोपहर
मुंह छुपाने लगी रेतली दोपहर ।

सिर पे साया उसे जो मिला ही नहीं
तो सुबह ही सुबह आ गई दोपहर ।

ताजगी से भरे फूल खिलते रहे
आग बरसी रुआंसी हुई दोपहर ।

बूट पालिश बुरूप कप प्लेटों में गुम
उसकी सारी सुबह खा गई दोपहर ।

दिन उगा ही नहीं शाम छोटी हुई
एक लम्बी सी हंफनी हुई दोपहर ।

शाम

दिन बीता चौपाया पंछी सी शाम
थकी-थकी घर लौटी दफ्तर की शाम ।

रोशन थी चंदा की लकदक से आंख
सारा दिन तरसी थी ममता की शाम ।

कद भर का साया था कांधे थी धूप
कुछ-कुछ वो हल्की थी कुछ भारी शाम ।

अलसायी सुबह थी उकताया दिन
दरवाजा तकती थी घूंघट की शाम ।

धरती का सरमाया झुलसाया इतराया
चमचमचम सूरज की टिमटिम सी शाम ।

सो भी जा

रात के ढाई बजे हैं, सो भी जा,
लोग सारे सो गए हैं, सो भी जा ।

है सुबह जल्दी जरूरी जागना
काम कितने ही पड़े हैं, सो भी जा ।

लाभ-हानि, जय-पराजय, शुभ-अशुभ,
रोज के ये सिलसिले हैं, सो भी जा ।

बेईमानी के विषय में सोच मत
होंठ सबके ही सिले हैं, सो भी जा ।

कौन क्या बोला तुझे ये भूल जा
लोग कुछ तो दिलजले हैं, सो भी जा ।

नींव अनाम सिपाही होंगे

होंगे जिल्ले-इलाही होंगे ।
साथी चोर सिपाही होंगे ।

जो खुद अपने साथ नहीं हैं
किसके क्या हमराही होंगे ।

खौफ ज़दा वो कान के कच्चे
क्या जुल्मों की गवाही होंगे ।

उनकी हस्ती, रिश्ते-नाते
सब के सब हरजाई होंगे ।

खुद को गलत समझने वाले
अपने ही शैदाई होंगे ।

नाम अमर चाहे इनका हो
नींव अनाम सिपाही होंगे ।

गुनगुनाना चाहिए

शायरी के हुस्न को यूं आजमाना चाहिए
एक पल के वास्ते सब छूट जाना चाहिए ।

हो गया है पिष्ट-पेषण अब ग़ज़ल में हर तरफ
बात में अब और कुछ नावीन्य लाना चाहिए ।

उग रही है हर मुहल्ले में अचानक बेशरम
बागवानी का नया अन्दाज़ आना चाहिए ।

चिमनियाँ, बादल घनेरे और भागमभाग के
कुछ तो इस माहौल में बदलाव आना चाहिए ।

सिर्फ भाषा में गणित की बात करना छोड़कर
अब ग़ज़ल के शेर कुछ पल गुनगुनाना चाहिए ।

मर जाती है बात

या तो बहरे कान से टकरा के मर जाती है
या हवाओं में कहीं लहरा के मर जाती है बात ।

दिल से दिल का रास्ता सीधा भी है, आसां भी है
अक्ल की दीवार से टकरा के मर जाती है बात ।

हर तरफ़ इक शोर है, नारे हैं जयजयकार है
आसमानी शोर में घबरा के मर जाती है बात ।

बात लगती है भली जब सब जुबानें एक हों
तर्जुमे के फेर में चकरा के मर जाती है बात ।

तो हम रुकें

बिन कहे ही बात अब, जो तुम कहो तो हम रुकें
इक नई बाराखड़ी, जो तुम गढ़ो तो हम रुकें ।

दंश शब्दों के बड़े ही लिजलिजे से हो गए
प्राण इनमें तुम अगर, जो कुछ भरो तो हम रुकें ।

बुत मुकाबिल हो तो फिर ये धर्म रक्षा व्यर्थ है
राम की, रावण की गाथा फिर गुनो तो हम रुकें ।

अब तो उठती ही नहीं है, हूक अफसानों से इन
दर्द का जो दर्द है, वो तुम बुनो तो हम रुकें ।

यूं तो होती ही है अक्सर चश्म नम ओ सुख भी
जो नजर निःस्तब्ध है, उसको पढ़ो तो हम रुकें ।

सौ वजूहात याद आने के

छोड़िये जिक्र उस ज़माने के
वो फसाने हैं दिल दुखाने के ।

एक कोशिश है भूल जाने की
सौ वजूहात याद आने के ।

ऐसे जाना भी यार क्या जाना
तोड़कर पुल गरीबखाने के ।

रामजी मुझको और दुख दे दो
काम आएंगे, गम भुलाने के ।

कितने आसान सबके सफर हो गये

कितने आसान सबके सफर हो गए
रेत पे नाम लिखकर अमर हो गए ।

इनसे-उनसे मिले थे मुझे जो यहाँ
गम वो सारे तुम्हारी नज़र हो गए ।

जैसे कुर्सी मिली, क्या करिश्मा हुआ
वो जो दुश्मन थे जानो-जिगर हो गए ।

साँप-सीढ़ी का ये खेल भी खूब है
वो जो नब्बे थे, बिल्कुल सिफर हो गए ।

एक लानत, मलामत, मुसीबत, बला
तेग लकड़ी की थी, सौ गदर हो गए ।

सबके चेहरे पे इक सनसनी की खबर
जैसे अखबार वैसे शहर हो गए ।

ये शिकायत जहाजों की है आजकल
उथले तालाब भी अब बहर हो गए ।

खुल्ला खाता है

जमहूरियत का यारो ये खुल्ला खाता है
ये हांक लगाता है वो बांग लगाता है ।

दो पक्ष पेशेवर हैं इस गोल इमारत में
पढ़ता है ये उत्तर तो वो प्रश्न उगाता है ।

ये अपनी फितरतों की खर्चीली नुमाइश है
ये शोर मचाता है वो हाथ उठाता है ।

हम लोग बदलने को चेहरे ही बदलते हैं
जो मुल्क का मालिक है वो गाल बजाता है ।

भक्तों पे पेंशनों पे तो आम सहमति है
तकरीर ये करता है वो ताली बजाता है ।

रोटी मकान कपड़ा, रामो रहीम इज्जत
क्या वादे वो करता है क्या ख्वाब दिखाता है ।

दे धक्का आगे बढ़ जा तू

कुछ मत कर, बस पूंछ हिला तू
दे धक्का, आगे बढ़ जा तू ।

कौन कहेगा नेकी कर के
होम कराते हाथ जला तू ।

पूछ जरा घर के लोगों से
घर वालों का नाम पता तू ।

भाषा बहर वजन के पीछे
मन की बात दबाता जा तू ।

गुन गुन गुन ही करता रह
और भला कर सकता क्या तू ।

सीख लिया

शब्दों का बाज़ार सजाना सीख लिया
हमने जय-जयकार लगाना सीख लिया ।

घर आंगन के जलने की परवाह किसे
हमने तो हूँकार लगाना सीख लिया ।

बस इक कोण से चीजें जानी परखी पर
अपने को अवतार कहाना सीख लिया ।

खूब भुनायी भूख, गरीबी लाचारी
पीड़ा को हथियार बनाना सीख लिया ।

कौन किसी का दुख बांटे जब लोगों ने
रिश्तों को औजार बनाना सीख लिया ।

मिल जुलकर रहने की केवल बातें कीं
आंगन में दीवार उठाना सीख लिया ।

बर्फ को पिघलने दो

बातचीत चलने दो
बर्फ को पिघलने दो

दर्द का तकाजा है
आंख को मचलने दो

कुछ सितारे चमकेंगे
आफ़ताब ढलने दो

ओस का करो स्वागत
रात को तो गलने दो ।

मन रसखान हुआ

तुझ पे कुरबान हुआ
मन रसखान हुआ ।

जाना जब नाम तेरा,
खुद अपना ज्ञान हुआ ।

आकर तेरे लब पर,
ये गीत अजान हुआ ।

उल्लेख तेरा जिसमें
वो शेर दीवान हुआ ।

तुझको चाहा भर था
कितना तूफान हुआ ।

दर्द बयान हुआ

जो बेइमान हुआ
उसका सम्मान हुआ ।

बेकार सत्य बोला
नाहक अपमान हुआ ।

इंसान हुआ आदम
व्यर्थ गुमान हुआ ।

रोटी, मकान, कपड़ा
इतना सामान हुआ ।

चाहा पढ़ें कसीदे,
दर्द बयान हुआ ।

लोग

भीगे रूमाल हिलाते लोग
सूखे मन ले जाते लोग ।

होठों पर षडयंत्री चुप्पी,
मन की गांठ दिखाते लोग ।

चंदा जाये झूलाघर तो
घर झूला ला पाते लोग ।

अपनी-अपनी पीर लिये सब
रोते लोग रुलाते लोग ।

शुद्ध गणित की भाषा में अब,
गीत ग़ज़ल भी गाते लोग ।

हम सभी

महफिलों के तलबगार हैं हम सभी
नींद से अपनी बेज़ार हैं हम सभी ।

सिर्फ बबलू हंसे, ये ही काफी नहीं,
माँ के आंचल के हक़दार हैं हम सभी ।

कोरे वादों से हमको न भरमाइये,
इन अदाओं से लाचार हैं हम सभी ।

वाईज़ों-पंडितों कुछ रहम भी करो,
एक अर्से से बीमार हैं हम सभी ।

अपनी बातों का अंदाज ऐसा लगे
जैसे ईसा के अवतार हैं हम सभी ।

हम बगावत के झंझट में पड़ते नहीं
पालतू हैं, वफ़ादार हैं हम सभी ।

शुक्रिया अलविदा खैरमकदम दुआ
लफ़्ज़ों में ही गिरफ़्तार हैं हम सभी ।

इन्सां को समझाए कौन

जलती आग बुझाये कौन?

अपने हाथ जलाए कौन?

दिल की तरह वो जिद्दी है,
अब उसको समझाए कौन?

ये भी खुदा है वो भी खुदा
किसके नाज उठाये कौन?

दुनिया आनी-जानी है
इन्सां को समझाए कौन?

अपनी मर्जी जाना क्या

बज़म से उठकर जाना क्या?

ऐसा भी इतराना क्या?

दर्द इनायत मालिक की,

दर्द का रोना-गाना क्या ।

मन के भीतर के मन को

छूना क्या, सहलाना क्या?

अपनी मर्जी आए कब

अपनी मर्जी जाना क्या?

अपनी जगह

शक शुब्हा अपनी जगह, शिकवा-गिला अपनी जगह,
दिल लगाने का हसीं ये सिलसिला अपनी जगह ।

यूं तो मिलते हैं गले हम, ईद पर हर साल ही,
पर दिलों का फासला, चुभता रहा अपनी जगह ।

कुछ है अखबारों मे शायी और दीवारों पे कुछ
जो कहा अपनी जगह और जो किया अपनी जगह ।

हो रहे थे खुरदरी सच्चाइयों से रू-ब-रू
पर निगोड़ी आँख में, इक ख्वाब था अपनी जगह ।

थोड़ा मन के अन्दर देख

पल-पल देख निरन्तर देख
थोड़ा मन के अन्दर देख ।

कैसे खेल दिखाता है,
आदमजात कलन्दर देख ।

इन्द्र सभा में कैद हुआ,
स्वर्ग का राजा इन्दर देख ।

अन्दर से सारे प्यासे,
नदियाँ और समन्दर देख ।

वो भी कितना तन्हा है,
दुनियाँ जीत सिकन्दर देख ।

पहले थोड़ा-सा तौला करो

तल्ख बातें न बोला करो
पहले थोड़ा-सा तौला करो ।

सामने कौन है – देखकर
दिल की गांठों को खोला करो ।

ऊंचे लोगों से कुछ तो डरो
अपने कद को मझोला करो ।

सारी दीवारें हैं खोखली
नींव को तो न पोला करो ।

बात कहनी है कड़वी अगर
थोड़ी शक्कर भी घोला करो ।

उर्मिला से पूछिए

पूछिए, सब कुछ हवा से पूछिए
खैरियत, लेकिन, खुदा से पूछिए ।

दर्दोगम की इन्तिहा से पूछिए
क्या खता थी बददुआ से पूछिए ।

रेल कितना कुछ हमारा ले गई
लक्ष्मण की उर्मिला से पूछिए ।

आश्वासनों के रंग हैं कितने मधुर
ये किसी ताजे पिता से पूछिए ।

वो हरे सिग्नल लगे कितने निठुर
फिक्र में डूबी दुआ से पूछिए ।

जानकी कैसे रही उद्यान में
रामजी की मुद्रिका से पूछिए ।

आजमाने का हुनर

जिनको आता है ग़ज़ल के गुनगुनाने का हुनर
उनसे जाके सीखिए, रातें जगाने का हुनर ।

ज़िन्दगी की जंग को जो जीतना है चाहता
है ज़रूरी सीख ले वो हार जाने का हुनर ।

आप आए, मुस्कराए और बस फिर छा गए
आपने सीखा कहाँ ये गुल खिलाने का हुनर ।

आएंगे, आ जाएंगे, वो बस अभी आ जाएंगे
ये तसल्ली है कोई या दिल जलाने का हुनर ।

यह खुला ऐलान है हम, हो गए हैं आपके
आजमा लें आप अपना, आजमाने का हुनर ।

उदास तो है

मेरा अहसास मेरे पास तो है
दिल जो रोया नहीं उदास तो है ।

सब समझते हैं जिसको परदेसी
वो कहीं दिल के आस-पास तो है ।

राम इस दौर में कहाँ होंगे,
राम जैसा कोई लिबास तो है ।

चल पड़ा है कोई हवा के खिलाफ
कुछ नतीजा नहीं है आस तो है ।

सबसे दोस्ती रखना

नजर में प्यार तो लहजे मे सादगी रखना
तुम अजनबी हो यहाँ सबसे दोस्ती रखना ।

मिले ये दिल न मिले हां में हां मिला देना
कभी सलीके में अपने न कुछ कमी रखना ।

मिला के हाथ न जानो कि दिल भी एक हुए
बहुत जरूरी है ये फासले अभी रखना ।

तुम्हारी बात का मतलब ही जो बदल डाले
तुम ऐसे यारों से कुछ दूर शायरी रखना ।

तुम्हे नज़र से गिरा दें न ये जहाँ ब्राले
तुम अपने पास विजय अपनी मुफ़िलसी रखना ।

सितारों की बात है

सागर की बात है ये किनारों की बात है,
अब किसको क्या मिला, ये सितारों की बात है ।

सच क्या है झूठ क्या है, किसी को पता नहीं,
नज़रों का है भरम, ये इशारों की बात है ।

क्या प्यार पा सकेगी, वो साजन के गांव में
डोली का प्रश्न है, ये कहारों की बात है ।

हम वाकई मिले हैं, कि बस है दुआ सलाम
अपनों का वहम है, ये हमारों की बात है ।

मूरत कहाँ बनी जो मेरे दिल में बैठती,
मिट्टी का दर्द है, ये कुम्हारों की बात है ।

जब डुग-डुगी बजी है तो चलना है तार पर,
गिरने का ये जुनूं है ये सहारों की बात है ।

मेरी तेरी सबकी बात

बुनियादी हक? झूठी बात,
जलसे, नारे, घूंसे, लात ।

विगलित मन, अन्धा चेतन
मेरी-तेरी सबकी बात ।

सूरज को भी नहीं पता
निशा निरापद, अटल प्रभात ।

लंगड़े तर्क, दिलों में फर्क
तारों की कुंठित बारात ।

पल भर चमके, लुप्त हो गए
जुगनू जैसी काली रात ।

सिस्टम ये बदलेगी यारों
लंगड़ी लूली शिष्ट जमात ।

सबकी अपनी एक सफाई

सबके अपने-अपने दुख हैं,
सबकी अपनी एक सफाई ।
जिसके मन के छाले फटे,
वो ही समझे पीर पराई

आंख फेर ली, लहजा बदला,
दामन झटका, भाग लिए
यारों खुद से खुद लड़ना है,
अपने खातिर आप लड़ाई ।

पथरीली धरती भी अपनी,
सपनीला आकाश भी अपना
ज़ख्म भी अपने मरहम अपना,
खुद की खुद के पास दवाई ।

बाजू अपने, गरदन अपनी
मुद्दे अपने, कूवत अपनी
गीत भी अपने दर्द भी अपना,
भीड़ भरी अपनी तनहाई ।

बढ़ा शिखर पर मारी ठोकर
पायदान को तोड़ दिया
जीवन की शतरंज में उसने
कभी आज तक मात न खाई ।

खत्म करो ये किस्सा-गोई,
ये लफ्फाज़ी बन्द करो
किसने चैन दिनों का खोया,

किसने अपनी नींद गंवाई?

कहां से लाऊं

व्यर्थ जीने के बहानों को कहां से लाऊं?
अपनी हस्ती के निशानों को कहां से लाऊं?

है ठिकाना नहीं जिनका कि कहां से गुजरें
ऐसी नदियों के मुहानों को कहां से लाऊं?

उम्र भर मैंने जुटाए हैं गुनाहों के सबूत
बेगुनाही के बयानों को कहां से लाऊं?

जो न सज़दे करे हुक्काम की दहलीजों पर,
उन गुनहगार जवानों को कहां से लाऊं?

रास्ता सख्त है और रात अंधेरी है बहुत
मैं तेरे प्यार के शानों को कहां से लाऊं?

रास्ता हमको दिखाएं जो अंधेरे पथ पर
उन बुजर्गों को, सयानों को कहां से लाऊं?

के लिए

कह रहा हूं ये ग़ज़ल तुझको सुनाने के लिए
तू मगर बेताब है यूं उठके जाने के लिए ।

इल्तज़ा है ये मेरी थोड़ी तो मेरी कद्र कर
मैं बड़ा ही कीमती हूं, यूं ज़माने के लिए ।

अपनी छत से नीचे आकर क्या नहीं मैंने किया
तू बता मैं क्या करूं तुझको लुभाने के लिए ।

है ये बस तेरे लिए, इसको ज़रा महसूस कर
प्यार कर सकता नहीं मैं यूं जताने के लिए ।

दे दिया सर्वस्व अपना, जो भी कहने के लिए
दे रहा हूं वो ग़ज़ल मैं गुनगुनाने के लिए ।

तो ग़ज़ल होती है - 1

दर्द में उम्र बसर हो तो ग़ज़ल होती है
या कोई साथ अगर हो तो ग़ज़ल होती है ।

तेरा पैगाम मगर रोज़ कहां आता है,
तेरे आने की खबर हो तो ग़ज़ल होती है ।

यूं तो रोते हैं सभी लोग यहां पर लेकिन
आंख मासूम की तर हो तो ग़ज़ल होती है ।

हिन्दी-उर्दू में कहो या किसी भाषा में कहो
बात का दिल पे असर हो तो ग़ज़ल होती है ।

ग़ज़लें अखबार की खबरों की तरह लगती हैं
हां तेरा जिक्र अगर हो तो ग़ज़ल होती है ।

तो ग़ज़ल होती है - 2

दिल में एक टीस जो उभरे तो ग़ज़ल होती है,
जख्म हो जाएं जो गहरे, तो ग़ज़ल होती है ।

आती-जाती तो है ये रेल सभी जगहों से,
जब तेरे गाँव से गुजरे तो ग़ज़ल होती है ।

उड़ती रहती हैं घटाएं तो बहुत-सी छत पर,
मेघ जो आंख में ठहरे तो ग़ज़ल होती है ।

होता रहता है बहुत, यूं तो दुनियादारी में
दिल पे कुछ खास ही गुजरे तो ग़ज़ल होती है ।

आपकी दुनियाँ का हम हाल बयां कैसे करें,
जब ग़ज़ल आपसी निखरे तो ग़ज़ल होती है ।

मेरी शायरी से उधार लो

मैं किसी ग़ज़ल की रदीफ हूँ मुझे कायदे से संवार लो
मैं हुनर नहीं मैं शऊर हूँ, मुझे ज़िन्दगी में उतार लो ।

मेरी हैसियत के ख्याल से जो रहे हो मुझसे जुदा-जुदा
मेरी तुमसे है यही इल्तज़ा मुझे देख खुद को संवार लो ।

यूँ तो वजन भी है मेरी कहन में सभी ठीक बनते हैं काफिये
मेरा दिल ये मुझको कहे मगर जरा फिक्र को भी निखार लो ।

मेरी जिन्दगी, मेरी मुश्किलें, मैं लडूंगा इनसे भी उम्र भर
कहां मैंने तुमसे कहा है ये, मुझे इन सभी से उबार लो ।

वो ही चाँद है, वो ही आस्माँ, वो ही भूख है, वो ही मुफलिसी
जो न कह सको नई बात तुम, मेरी शायरी से उधार लो ।

सूर्य मेघों के भीतर छितर जाए रे

तेरे आंचल की मकई बिखर जाए रे
ज्यों सितारे जमीं पर उतर आए रे ।

भटकि मेले में ज्यों अचकची-सी दुल्हन
देख साजन को कैसे निखर जाए रे ।

मेघ की हलचलों में कंवारी किरन
बंद कमरे में सुख से सिहर जाए रे ।

बादलों से ढके दिन से थक कर के सांझ
शिकवे-सूरज से कर चुप से ढर जाए रे ।

सूखे खेतों में पपड़ी उभर आए पर
सूर्य मेघों के भीतर छितर जाए रे ।

वो उनकी लुगाई है

चेहरे पर चमक जैसे दिल्ली की लुनाई है,
जो गांव में बैठी है वो उनकी लुगाई है ।

मक्कार खुदाओं से बेहतर तो मदारी है,
दिल खोल के कहता है हाथों की सफाई है ।

हड़ताल पे टीचर है, बच्चे हैं सनीमा में
बबली ने किताबों में इक, चिट्ठी छिपाई है ।

इंसान को जीने का कोई न हुनर आया,
ये मेरे मदरसों की, क्या खूब पढ़ाई है ।

बीमार कहाँ जाए? मज़रूह कहाँ जाए?
सरकारी दवाखाने मरहम न दवाई है ।

ईनाम के लालच दो या धौंस दो ज़िल्लत की,
मैं क्यों न कहूं वो सब, जो तल्ख सचाई है ।

शहज़ादा नहीं इसमें शहज़ादी नहीं इसमें,
ये कैसी कहानी है, ये कैसी रूबाई है ।

मिलते हैं खुदा अक्सर, रब तेरी खुदाई में
वो शख्स कहाँ जिसके पैरों में बिवाई है ।

आसपास

डोलते फिरते हैं तारे, चन्द्रमा के आसपास
जल रहा सूरज अकेला, कौन जाए आसपास ।

आज उतरी है ज़मीं पर, नभ के लोगों की बारात
ढूँढ लो तुम चांद को, होगा यहीं पे आसपास ।

तयशुदा दो चार जुमले, कुछ अदाएं तयशुदा
है ये साहिब की मुहब्बत, या इसी के आसपास ।

कब किसे इस ज़िन्दगी में, चाहने से कुछ मिला
जो मिला आधा अधरा, या नहीं के आसपास ।

न हो

कब कहा है गलतियों की कोई समझाइश न हो
आदमी के कद की लेकिन रोज़ पैमाइश न हो ।

दीप यों ही जगमगाएं, इस दिवाली की तरह
तीरगी की आपके जीवन में गुंजाइश न हो ।

चाहते हैं सब कि बदले ये अंधेरो का निजाम
पर हमारे घर किसी बागी की पैदाइश न हो ।

हो अगर काबिल बहस जो मुद्दा तो ठीक है
वर्ना यूँ ही बेवजह की जोर आजमाइश न हो ।

सब वही है फिर मुझे क्यूं यूँ लगा करता 'विजय'
जैसे कुछ अपना नहीं हो, एक भी ख्वाहिश न हो ।

शानदार

साफ-सुथरा पारदर्शी आर-पार
और इसके बाद भी हैं पायेदार

जुगनुओं को थी ज़रूरत रात की
सूर्य ने कब था छपाया इश्तहार

या खुदा वो कान दे कि सुन सकूं
उसके भीतर बज रहा है जो सितार

डूबना, वो भी तुम्हारा डूबना
बारिशों में छेड़ते हो क्यूं मल्हार

पेड़, चिड़िया, घोंसले, कविता, नदी
नाम सब तेरे ही हैं परवरदिगार

बात कहने का हुनर बस लाज़वाब
बात भी होती है उसकी जानदार

चन्द लब्ज़ों में ये उसका है बयां
शानदारों से बड़ा वो शानदार

दो पद चिन्ह तेरे

अगर अपने होने का धोखा रहेगा
तभी तो इबादत का मौक़ा रहेगा ।

दो पद चिन्ह मेरे दो पद चिन्ह तेरे
जमा खर्च इतना सा होता रहेगा ।

मुझे होश खोकर भी ये होश होगा
खुला अपने दिल का झरोखा रहेगा ।

बदलता बदलता बदलता लगेगा,
बदलता मगर सिर्फ़ खोखा रहेगा ।

पन्थ बनता जाएगा

रफ़ता-रफ़ता ज़िंदगी का मार्ग कटता जायेगा
लम्हा-लम्हा पूर्णता की सिम्त बढ़ता जाएगा ।

कब पता था साथ होंगी इस कदर आसानियाँ
पांव रक्खूँगा जहाँ मैं पन्थ बनता जाएगा ।

और फिर अनमोल सी इस ज़िंदगी की राह पर
कोई अपने पांव के कुछ चिन्ह रखता जाएगा ।

एक चिड़िया चोंच में तिनका समेटे आएगी
इक घरोँदा तिनका-तिनका यों ही बनता जाएगा ।

सूर्य देगा रोशनी भी और गर्मी भी सुखद
आ के कोई पेड़ सिर पर छांह करता जाएगा ।

इस करम का शुक्रिया बस मेरे मालिक ये बता
क्या तेरा बच्चा मुकद्दर साथ लेता जाएगा?

कर लो

पहले चाहत को तिश्नगी कर लो
फिर जो चाहो वो तुम सभी कर लो ।

बहते दरिया पे हक सभी का है,
तुम जरा प्यास में कमी कर लो ।

बच्चा मासूमियत का झरना है
उसके हाथों से गुदगुदी कर लो ।

जिन्दगी सिलसिला है सुख-दुख का
क्यों किसी सुख की त्रासदी कर लो ।

हाँ अगर काफिया तुम्हें न मिले
अपने उस्ताद की कही कर लो ।

होते गये

जैसे-जैसे हम बड़े होते गए,
झूठ कहने में खरे होते गए ।

चांदबाबा, गिल्ली डंडा, इमलियाँ,
सब किताबों के सफे होते गए ।

अब तलक तो दूसरा कोई न था,
रफ़ता-रफ़ता तीसरे होते गए ।

एक बित्ता कद हमारा क्या बढ़ा,
हम अकारण ही बुरे होते गए ।

जंगलों में बागबां कोई नहीं,
इसलिए पौधे हरे होते गए ।

बातें करें – 2

कुछ आस की बातें करें ।
विश्वास की बातें करें ।

आ इस समुन्दर से मिलें ।
फिर प्यास की बातें करें ।

सिलसिले गुम हो गए,
इतिहास की बातें करें ।

लफ़्ज़ मानो खो चुके ।
एहसास की बातें करें ।

क्या करूं

ये करूं वो भी करूं ऐसा करूं वैसा करूं
हो गया सब कुछ मगर, फिर भी लगे मैं क्या करूं ।

जिन्दगी भर जूझ कर जो रंक से राजा बना,
उसकी आंखों में उदासी का सबब ढूंढा करूं ।

क्या जरूरी है कि हर संबंध को इक नाम दूं
तू मुझे देखा करे और मैं तुझे देखा करूं ।

आंधियों के वेग से उद्दाम उठती धार पर,
भाल बिन्दी आंख कांधे डूबकर चूमा करूं ।

एक दिन के वास्ते तू माँ मेरी बन जा प्रिये,
गोद में मुझको लिटाकर जाग, मैं सोया करूं ।

नाजुक हिस्से दे

दे दे मुझको आस-पास के अपने जैसे किस्से दे
जिन्हें जोड़कर एक हो सकूं ऐसे नाजुक हिस्से दे ।

अपने-अपने गम और खुशियाँ ढोने वाले इस युग में
इससे लेकर कुछ गम दे दे, थोड़ी खुशियाँ उससे दे ।

नदियां, नाले, खंदक, खाई पार सभी को करना हैं
पुल हम इस पर बना ही लेंगे तू बस केवल रस्से दे ।

टुकड़ा-टुकड़ा चांद उगा है धूप खिली है किशतों में
हमको एक पूरी की पूरी दुनियाँ बना अलग से दे ।

रह गई

जो कभी थी इक हकीकत अब कहानी रह गई
जोड़ बाकी के गणित की तर्जुमानी रह गई ।

जब ढले रंगीन शीशों में तो हो रंगीन वो
यों ग़ज़ल तो अब महज बेरंग पानी रह गई ।

शाहजादों के करिश्मे और परियों की कथा
आज के बच्चों की जैसे बूढ़ी नानी रह गई ।

गर्दनें तारीफ में हर शेर पर हिलती रहीं
शेष केवल दाद में बस दुम हिलानी रह गई ।

केंचुआ

केंचुओं में भी छोटा-बड़ा केंचुआ,
कितने ऊंचे पे जा के चढ़ा केंचुआ ।

शक्तिशाली के आगे तो बेबस हुआ,
आप-हम के लिये नकचढ़ा केंचुआ ।

इस पनाले का पानी क्यों रुकने लगा,
देखना ये मुहाने अड़ा केंचुआ ।

यों सभी के लिये मांस का लोथड़ा,
केंचुए की नजर में गड़ा केंचुआ ।

अच्छा लगा

जब गज़ल के हमकदम महफिल चली अच्छा लगा ।
शेर पर मेरे जो तुमने वाह की अच्छा लगा ।

यों तो कहते हैं यहाँ पर कुछ न कुछ हम तुम सभी,
बात मेरी थी तुम्हें अपनी लगी अच्छा लगा ।

सौ तरह की बंदिशों के बीच जो मैंने कहा
तेरी नजरों ने मेरी ताईद की अच्छा लगा ।

शायरी में लाज़मी है एक हद तक पेचोखम
फिर भी मेरी बात सम्प्रेषित हुई अच्छा लगा ।

अपनी बातें आप तक पहुंचा सकूं ये फिक्र थी
इसलिये जब शेर पर ताली बजी अच्छा लगा ।

शायरी के पारखी की फिक्र अब किसको हो क्यों
तुमने मेरे शेर पर जो दाद दी अच्छा लगा ।

नमी कुछ रूमालों में है

वो कहां राजधानी के महलों में है
जो सुदामा के चावल के दानों में है ।
जिसपे झूले पड़े थे वो पीपल हरा
अब सजावट के सामां सा गमलों में है ।
हम जहाजों से उड़कर कहां जाएंगे
लौटना तो पुराने मुहल्लों में है ।
दोस्त यारों ने अब तक जो बख्शी हमें
वो मोहब्बत कहां अपने तमगों में है ।
आसमां इनके कदमों तले आ सके
जान इतनी तो नन्हे परिन्दों में है ।
इन हवाओं की खुशकी का ये राज़ है
सब शहर की नमी कुछ रूमालों में है ।

है वो

याद की सीढ़ी से साये की तरह उतरा है वो
इस तरह दुनियां में मेरी लौटकर आया है वो ।

इक खिलौना दो उसे कुछ पल को चुप हो जाएगा
इन दिनों इक छोटे बच्चे की तरह तनहा है वो ।

उसको बहलावे नहीं कुछ थपकियां दरकार हैं
हर किसी आहट पे पांखी सा डरा जाता है वो ।

बन्द आंखों में जगा करता था जो आठों पहर
आज आंखें खोलकर किस नींद में सोया है वो ।

घर की छत, नदियों, किनारों, और खुद से ऊबकर
ठोस पत्थर की तरह आराम से लेटा है वो ।

कूव्वते इंतजार आ जाए

सांस पर इख्तियार आ जाए
वो अगर एक बार आ जाए ।

वो शज़र सायादार आ जाए
धूप का ऐतबार आ जाए ।

कोई तो ढूँढ लाए उस जैसा,
जिसको देखूं कि प्यार आ जाए ।

अपने बच्चे ही जो मुकाबिल हों,
अपने हिस्से में हार आ जाए ।

अब हमें इंतजार करना है,
कूव्वते इंतजार आ जाए ।

दूर तक जाती लगे

इस ग़ज़ल के साथ चलती साथ गाती-सी लगे,
कौन है जो शब्द में जादू जगाती-सी लगे ।

एक स्वर जो गुनगुनाकर कान में कुछ कह गया,
हाँ वही आवाज फिर-फिर पास आती-सी लगे ।

अर्थ पर, एहसास पर, आवाज पर, हैं बंदिशें,
सब तरफ प्रतिबंध लेकिन हूक आती सी लगे ।

शेर जिसका स्तब्धता को और तीखा कर गया
उस ग़ज़ल की आंच मुझको दूर जाती सी लगे ।

अटका है पांखी

हरे कच्च इस वन में आकर खोया है पांखी
अनायास ही सोये मन में झांका है पांखी ।

नीले-नीले प्रेमगीत के मुखड़े जैसा है
नभ का टुकड़ा है ये सुख की वर्षा है पांखी ।

जाने कौन दिशा से आया, जाएगा किस ओर
मन्द पवन की फुगड़ी है ये, गरबा है पांखी ।

घर सारे वर्षा में भीगे, देहधर्म भीगे
अपने पंखों के कौतुक में डूबा है पांखी ।

धूप में भीगा मन, शब्दों के अर्थ-अनर्थ करे
भरे गले की देहरी पर यूं अटका है पांखी ।

दिन हफ्ते पखवाड़े बदले

दिन हफ्ते पखवाड़े बदले सन् भी बदले हैं
लेकिन घर के सारे कोने पहले जैसे हैं ।

आज सुबह तेरी अल्मारी मैंने खोली थी
और तभी से तेरी खुशबू मुझको घेरे है ।

मेरी सारी अच्छी शर्टें तू रख लेता था
देख आज तेरे ये कपड़े मैंने पहने हैं ।

सब कहते हैं, तू सपनों में आकर मिलता है
अपनी किस्मत में सपने भी किस्मत जैसे हैं ।

लेखक परिचय

बड़ी-बड़ी मूंछों और पुलिस अफसर की वर्दी में लाल बत्ती की गाड़ियों में घूमना शुरू करने के पहले विजय वाते कॉलेज में इतिहास पढ़ाते थे और ज्ञान के उन ऐतिहासिक आदान-प्रदान के दिनों में भी कविताएं लिखते पढ़ते थे।

उम्र के करीब साढ़े चार दशक पार कर चुके विजय वाते अब मध्यप्रदेश पुलिस में डी.आई.जी. हैं। उनके व्यक्तित्व में कवि, पुलिस अफसर, लोगों के दुख सुनने और उनका समाधान करने की जो कई धाराएं हैं उनकी तुलना उनके जन्म स्थान रतलाम से ही की जा सकती है जहाँ रेलवे की कई लाइनें देश के कई कोनों से आकर मिलती हैं और कई रेल गाड़ियाँ नाम और चेहरे बदल कर आगे बढ़ जाती हैं। और हाँ, बड़ी-बड़ी तो क्या, मूंछें उनके चेहरे पर अब रही ही नहीं।

कविता में बहुत सारे प्रयोग करने के बाद विजय वाते ने ग़ज़ल को अपनी अभिव्यक्ति की मुख्यधारा के तौर पर चुना और निजी किस्म के श्रोताओं की सभा से लेकर औपचारिक मजलिसों और महफिलों तक उन्हें सार्थक रचना होने की मान्यता और रचनात्मकता की स्वीकृति मिली है। शिल्प के दुराग्रहों से मुक्त, फिर भी निराकार के व्योम में आकार की प्रतीति देती उनकी ग़ज़लों को उस्तादों से लेकर आम काव्य रसिकों की सराहना मिली है।

चंबल के बीहड़ों से लेकर असम-नागालैंड तक की खाइयों में हथियार लेकर हिंसा का सामना और प्रतिकार करने के लिए भटके विजय वाते की ग़ज़लें शब्द और अभिव्यक्ति के संसार में किसी भी किस्म के आतंक और आक्रमण की हिंसा में यकीन नहीं करतीं। उनकी ग़ज़लें, उन्हीं की तरह सहज, सरल और पारदर्शी हैं। ये आपको चौंकाती नहीं, आपका हिस्सा बन जाती हैं और बनी रहती हैं।

—आलोक तोमर